[2021] 1 उम. नि. प. 204

आर. पूर्णिमा और अन्य

बनाम

भारत संघ और अन्य

[2019 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 1172]

4 सितम्बर, 2020

मुख्य न्यायमूर्ति एस. ए. बोबडे, न्यायमूर्ति ए. एस. बोपन्ना और न्यायमूर्ति वी. रामासुब्रमण्यिम्

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 32 और अनुच्छेद 217 का खंड (2) का उपखंड (क) और (कक) – रिट याचिका – उच्च न्यायालय में न्यायाधीश के रूप में नियुक्त होने के लिए अर्हता – अधीनस्थ न्यायालयों में कार्यरत न्यायाधीशों और वकालत करने वाले व्यक्ति की अर्हता – यदि किसी उच्च न्यायालय में न्यायाधीश के रूप में नियुक्त होने के लिए, संविधान, 1950 में समुचित उपबंध कर दिए गए हैं तो उन्हीं उपबंधों का अनुसरण करते हुए ही नियुक्तियां की जानी चाहिए अन्यथा नहीं और उन उपबंधों का निर्वचन भी उपबंध में निहित भावना के अनुरूप ही किया जाना चाहिए, अन्यथा नहीं ।

वर्तमान मामले में, याचियों के साथ ही साथ प्रत्यर्थी सं. 24 से 29 सम्यक् रूप से चयनित थे और गृह विभाग के तारीख 18 फरवरी, 2011 के शासकीय आदेश जी ओ एमएस संख्या 170 द्वारा प्रत्यक्ष भर्ती के माध्यम से जिला न्यायाधीशों (प्रारंभिक स्तर) के रूप में नियुक्त किए गए थे । इसलिए, सुस्पष्टतः, उन्होंने उस तारीख को न्यायिक अधिकारियों के रूप में 10 वर्ष की सेवा पूरी नहीं की थी । किन्तु, जिला न्यायाधीशों के रूप में अपनी नियुक्ति के समय पर तमिलनाडु और पुडुचेरी बार कौंसिल में नामांकन कराने के पश्चात्, याची सं. 1 से 6 ने अधिवक्ताओं के रूप में 10 वर्ष से अधिक की वकालत पहले ही पूरी कर चुके थे, याची सं. 7 ने 9 वर्ष और 10 माह की अधिवक्ता के रूप में वकालत कर चुका था और याची सं. 8 ने 8 वर्ष और 6 माह का

वकालत कर चुका था । जिला न्यायाधीशों के कैडर में याची और प्रत्यर्थी सं. 25 से 29 ज्येष्ठतम थे जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा निर्मुक्त अधिकारियों की वार्षिक सूची से प्रतीत होता है । प्रत्यक्ष भर्ती में ज्येष्ठता जैसा कि इसमें के याचियों की है, प्रोन्नत व्यक्ति पर मद्रास उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ द्वारा 2014 की रिट याचिका सं. 20069 में दिए गए तारीख 26 फरवरी, 2015 के निर्णय द्वारा भी बल मिलता है । याचियों की संक्षिप्त शिकायत यह है कि जिला न्यायाधीशों के कैडर में ज्येष्ठतम होने के बावजूद उनकी अनदेखी की गई है और उनके कनिष्ठों को न्यायाधीशों के रूप में उच्च न्यायालय में नियुक्त करने के लिए अब सिफारिश की गई है । याचियों के अनुसार, ऐसा उच्च न्यायालय के कालोजियम द्वारा संविधान, 1950 के अनुच्छेद 217(2) के अधीन स्पष्टीकरण (क) को एकमात्र रूप से लागू करते हुए किया गया है । याचियों की दलील यह है कि एक व्यक्ति की अर्हता अवधारित करते समय, अनुच्छेद 217 के खंड (2) के उपखंड (क) और (ख) के साथ स्पष्टीकरण (क) और (कक) को समान रूप से लागू करना चाहिए । साधारण निबंधनों में, याचियों ने ईप्सा की है कि उनकी अर्हता अवधारिता करते समय, उनके द्वारा अधिवक्ताओं के रूप में अर्जित अनुभव को न्यायिक अधिकारियों के रूप में उनके द्वारा की गई सेवा के साथ जोड़ा जाना चाहिए । एक बार जब इसे जोड़ा जाना मंजूर कर लिया जाता है तो याचियों की जिला न्यायाधीशों के कैडर में ज्येष्ठता की प्रास्थिति का लाभ सुस्थिर हो जाता है जिससे उनकी ज्येष्ठता प्रत्यर्थी सं. 5 से 23 के ऊपर जाती है । दूसरे शब्दों में, याचियों ने सभी से बेहतर होने की ईप्सा की है । आगे कार्यवाही करने के पूर्व, हम यह उल्लेख करना चाहते हैं कि प्रत्यर्थी सं. 5 से 23 जिला न्यायाधीशों के नीचे कैडर में न्यायिक अधिकारियों के रूप में नियुक्त हुए थे । लंबी सेवा के पश्चात् उन्होंने जिला न्यायाधीशों के पद पर प्रोन्नति प्राप्त की थी । किन्तु, उनकी प्रोन्नति उस तारीख को हुई थी जिस तारीख को याचियों की जिला न्यायाधीशों के रूप में प्रत्यक्ष भर्ती हुई थी । इसलिए, क्यों और कैसे याची, प्रत्यर्थी सं. 5 से 23 से ज्येष्ठ हो गए हैं । जब राज्य न्यायिक अधिकारियों में से भरने के लिए नियत कोटा 1/3 के विरुद्ध न्यायाधीशों के रूप में उच्च न्यायालय में नियुक्ति के लिए

नियुक्तियां उद्भूत हुई थी तब उच्च न्यायालय के कालोजियम ने यह पाया कि याचियों ने अनुच्छेद 217 (2)(क) द्वारा यथाअपेक्षित न्यायिक अधिकारी के रूप में 10 वर्ष की सेवा पूरी नहीं की थी । इसलिए, उच्च न्यायालय के कालोजियम ने उन व्यक्तियों के नामों की सिफारिश की थी जो अर्हता मानदंड को पूरा करते थे । उच्च न्यायालय के कालोजियम की ओर से की गई इस कार्रवाई से व्यथित होकर याचियों ने यह रिट याचिका फाइल की है । माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अनुच्छेद 217 की भाषा से, यह स्पष्ट है कि खंड (1) मात्र नियुक्ति का तरीका और वह आयु विहित करता है जिस आयु तक नियुक्त व्यक्ति पद धारण कर सकता है । खंड (2) में दो चीजें हैं । प्रथमतः, यह खंड (2) के उपखंड (क) और (ख) के अधीन नियुक्ति के लिए अर्हता अनुध्यात करता है । उसके बाद यह स्पष्टीकरण के दो भागों के अधीन ऐसे अर्हता की गणना का तरीका अनुध्यात करता है । वस्तुतः, अनुच्छेद 17 के खंड (2) के दो भाग हैं, जिसका प्रथम भाग उपखंड (क) और (ख) हैं और द्वितीय, स्पष्टीकरण (क) और (कक) है । प्रथम, उस साधारण निबंधनों को उपदर्शित करता है जो नियुक्ति के लिए अर्हता होनी चाहिए, व्यक्ति को (i) भारत का नागरिक होना चाहिए और (ii) या तो कम से कम 10 वर्ष तक न्यायिक पद धारण किया जाना चाहिए या 10 वर्ष तक उच्च न्यायालय के अधिवक्ता के रूप में कार्य किया जाना चाहिए । मान लिया जाए कि अनुच्छेद 217 के खंड (2) के अधीन कोई 'स्पष्टीकरण' नहीं हो तो उसके बाद ऐसे किसी तर्क के लिए कोई जगह नहीं बचती है, यह आंख मूंद कर स्वीकार करने के अलावा कि अनुच्छेद 217 के खंड (2) में अनुध्यात अर्हता 2 पृथक् स्रोतों अर्थात् (i) न्यायालय से या (ii) न्यायिक सेवा से जैसा कि अनुच्छेद 236 के खंड (ख) में परिभाषित है, से एक व्यक्ति द्वारा अर्जित किया जा सकता है । यह इस कारण से है कि उपखंड (क) और (ख) वस्तुतः वैकल्पिक है जैसा कि उनके बीच प्रयुक्त शब्द 'या' से प्रतीत होता है । मरियम वेबस्टर डिक्शनरी के अनुसार, अंग्रेजी ग्रामर में शब्द 'या' का अभिप्राय 'समन्वय सहयोजन' से है । जबकि शब्द 'और' जो भी एक

सहयोजन है समेकित रूप से कुछ और जोड़ने के अभिप्राय में है, शब्द 'या' वैकल्पिक तौर पर कुछ और जोड़ने के अभिप्राय में है । जहां तक खंड (2) के प्रथम भाग का संबंध है, जैसा कि पूर्ववर्ती कथित है, खंड (2) का प्रथम भाग उपखंड (क) और (ख) में है । अनुच्छेद 217 के खंड (2) का द्वितीय भाग जिसे 'स्पष्टीकरण' के प्ररूप में लिया गया है मात्र उन तरीकों को स्पष्ट करता है जिनमें उपखंड (क) और (ख) में उपदर्शित अवधियों का अर्थान्वयन किया जाता है । रुचिकर तौर पर अनुच्छेद 217 के खंड (2) के अधीन स्पष्टीकरण के भी 2 भाग हैं । एक उपखंड (क) में दिया गया है और दूसरा उपखंड (ख) में दिया गया है । स्पष्टीकरण (क) उपखंड (क) के साथ है और स्पष्टीकरण (कक) उपखंड (ख) के साथ है । यह इस कारण से है कि स्पष्टीकरण (क) न्यायिक अधिकारियों की सेवा की वर्षों की संख्या में अतिरिक्त कुछ अतिरिक्त वर्षों को भी जोड़ने की अनुज्ञा देता है अर्थात् (i) वह अवधि जिसके दौरान कोई व्यक्ति उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहा है या (ii) वह अवधि जिसके दौरान कोई व्यक्ति अधिकरण के सदस्य के रूप में पद धारण किया हो । इसी प्रकार, स्पष्टीकरण (कक) उन अतिरिक्त अवधियों के वर्षों को जोड़ने की अनुज्ञा देता है जिसके दौरान कोई व्यक्ति उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहा है, कुछ अन्य अवधि अर्थात् वह अवधि जिसके दौरान वह कोई न्यायिक पद धारण किया हो या अधिकरण के सदस्य के रूप में पद धारण किया हो । स्पष्टीकरण (क) के अनुसार, न्यायिक पद धारण करने की अवधि की संगणना में वह अवधि भी सम्मिलित की जाएगी जिसके दौरान कोई व्यक्ति किसी उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहा है । किन्तु, स्पष्टीकरण (क) के अधीन कुछ अन्य अवधि को ऐसे जोड़ने की शर्त यह है कि ऐसी अन्य अवधि का न्यायिक सेवा में अनुसरण किया जाना चाहिए न कि पूर्वोदाहरण के रूप में लिया जाना चाहिए । इसे 'उसने कोई न्यायिक पद धारण किया है, के पश्चात्' शब्दों के प्रयोग द्वारा स्पष्ट किया गया है । इसमें के याचियों द्वारा यह ईप्सा की गई है कि उनकी न्यायिक सेवा की अवधि में उनके उस अनुभव को भी जोड़ा जाए जिसे वे न्यायिक सेवा ग्रहण करने के पूर्व न्यायालय में अधिवक्ता के रूप में कार्य किया है । दूसरे

शब्दों में, याचियों ने यह ईप्सा की है कि शब्द 'पश्चात्' का निर्वचन इस अभिप्राय में किया जाए और उसमें 'पूर्व' सम्मिलित किया जाए । न्यायालय, निर्वचन का ऐसा कोई नियम नहीं जानता है जो शब्द 'पश्चात्' का निर्वचन इस अभिप्राय में किया जाता है जिसमें 'पूर्व' सम्मिलित हो । अनुच्छेद 217 के खंड (2) के उपखंड (क) और (ख) में स्पष्टीकरण (क) और (कक) की सूक्ष्म परीक्षा से यह दर्शित होता है कि एक व्यक्ति इस प्रकार अर्हता अर्जित कर सकता है जैसा कि अनुच्छेद 217 में उपदर्शित है – (i) या तो अनन्य तौर पर न्यायालय से जैसा कि उपखंड (ख) में उपबंधित है, (ii) या अनन्य तौर पर न्यायिक सेवा से जैसा कि खंड (क) में उपबंधित है, (iii) या दोनों समूहों से जैसा कि स्पष्टीकरण (क) और (कक) में उपबंधित है । किन्तु, यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि अनुच्छेद 217(2), मात्र अर्हता मानदंड और उसकी संगणना का तरीका विहित करता है । यदि कोई व्यक्ति, अर्हता मानदंड को पूरा करता पाया जाता है तो उसे पंक्तियों में से एक पंक्ति में उसकी नियुक्ति होनी चाहिए । दो पृथक् पंक्तियां हैं, एक न्यायिक सेवा से और दूसरा न्यायालय में वकालत करने से । किसी व्यक्ति को नियुक्ति के लिए उसके नाम पर विचार करने की तारीख पर उसकी प्रास्थिति और उसी समय अन्य पंक्ति में मुखौटा ओढ़ने वाले व्यक्ति को ध्यान में रखते हुए, नियुक्त नहीं किया जा सकता है जिससे कि वह दोनों में से किसी पंक्ति से या दोनों के संयोजन से विचार के जोन के भीतर दावा कर सकता है । पंक्ति जिससे कोई व्यक्ति समनुदेशित है, विचार की तारीख पर उसकी प्रास्थिति पर निर्भर करता है । यदि कोई व्यक्ति, विचार की तारीख पर एक अधिवक्ता है तो वह न्यायालय के सदस्यों के लिए अभिप्रेत पंक्ति में से ही अपना स्थान ले सकता है, यदि कोई व्यक्ति, विचार की तारीख पर न्यायिक अधिकारी है तो वह सेवा अभ्यर्थी के लिए अभिप्रेत पंक्ति में से ही अपना अवसर लेगा । एक पंक्ति से दूसरी पंक्ति में एक साथ आना और जाना अनुज्ञेय नहीं है । आज की तारीख पर यदि याचियों में से कोई न्यायिक अधिकारियों के रूप में नहीं रह जाता है और अधिवक्ता हो जाता है तो वह न्यायालय में वकालत करने के लिए आशयित कोटा के विरुद्ध विचार किए जाने के

लिए अर्ह हो सकता है । किन्तु, न्यायिक अधिकारियों के रूप में निरंतर कार्य करते हुए, वे स्पष्टीकरण 'क' का अवलंब नहीं ले सकते हैं क्योंकि यह मात्र उन व्यक्तियों को लागू होता है जो न्यायिक पद धारण करने के पश्चात् अधिवक्ता हो गए हैं । विवाद्यक को एक अन्य दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है । याचियों ने लड़ने वाले प्रत्यर्थियों पर और उनके ऊपर सफलतापूर्वक दावा किया है और ज्येष्ठता अर्जित कर ली है, इस आधार पर कि लड़ने वाले प्रत्यर्थियों को जिला न्यायाधीश के रूप में प्रोन्नति प्राप्त करने के पूर्व ही उनकी जिला न्यायाधीशों के पद पर प्रत्यक्ष तौर पर भर्ती हो गई थी । दूसरे शब्दों में, ज्येष्ठता के प्रयोजन के लिए याचियों ने जिला न्यायाधीशों के कैडर में भर्ती की तारीख तक अनन्य रूप से अर्हता प्राप्त कर ली थी और न कि न्यायिक सेवा में संपूर्ण सेवा की अवधि द्वारा या (ii) न्यायालय में वकालत करने के वर्षों की संख्या और न्यायिक सेवा के वर्षों की संख्या के संयोजन द्वारा । किन्तु, अर्हता अवधारित करने के प्रयोजन के लिए उन्हें एक अधिवक्ता के रूप में वकालत करने की संपूर्ण अवधि और न्यायिक पद में सेवा करने की अवधि द्वारा प्राप्त करने की ईप्सा थी । यदि जोड़ने की अनुज्ञा दी जाती है तो लड़ने वाले प्रत्यर्थियों को भी अनुज्ञा दी जानी चाहिए जिसे यदि किया जाता है तो याचियों की ज्येष्ठता भी गड़बड़ा जाएगी । यद्यपि, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री राकेश द्विवेदी ने यह निवेदन किया है कि उनके मुवक्किलों को लड़ने वाले प्रत्यर्थियों को भी जोड़ने का फायदा मंजूर करने में कोई आक्षेप नहीं हो सकता है, न्यायालय का यह विचार है कि यह सुविधा के लिए एक तर्क है । सेवा कोटा के अधीन रिक्तियों को भरने के लिए, उच्च न्यायालयों के कालोजियम, न्यायिक अधिकारियों के एसीआर और उनके निर्णयों पर 1:3 या 1:5 या इसी प्रकार से विचार करते हैं । इसी प्रकार का कार्य करते हुए, उच्च न्यायालयों द्वारा न्यायिक अधिकारियों की ज्येष्ठता सूचियों को कायम रखा जाता है । यदि, 3 रिक्तियों को भरना होता है तो 9 या 15 ज्येष्ठतम अधिकारियों की प्रोफाइल पर विचार किया जाता है । यदि याचियों के तर्क को स्वीकार कर लिया जाता है तो वे दोनों न्यायालय और सेवा में सेवा की संपूर्ण संख्या के निबंधनों में याचियों से

अत्यधिक ज्येष्ठ हो जाएंगे । ऐसी दशा में, याची किसी भी प्रकार से विचार जोन (प्रथम 9 या 5 के भीतर) के आस-पास भी नहीं आ पाएंगे । प्रत्येक राज्य में कम से कम 100 न्यायिक अधिकारी अर्हता मापदंड को पूरा करेंगे, यदि याचियों के तर्क को स्वीकार कर लिया जाता है । वर्तमान मामले को लेते हैं, जहां एक व्यक्ति न्यायालय में 10 वर्ष की वकालत करने के पश्चात्, जिला न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया जाता है । यदि, याचियों की दलील स्वीकार कर ली जाती है तो ऐसे व्यक्ति जिला न्यायाधीश के रूप में अपनी नियुक्ति के एक दिन से ही अर्ह हो जाएंगे । चूंकि, ऐसे सभी व्यक्तियों को रिक्तियों की सीमित संख्या के कारण विचार नहीं किया जा सकता है, इसलिए, ज्येष्ठता सूची कायम रखी जाती है और अधिकारियों की एक विशिष्ट संख्या को विचार जोन में लिया जाता है जो कि कोटा के अधीन भरे जाने के लिए ईप्सित रिक्तियों की संख्या पर निर्भर करती है । याचियों के तर्क का सार यह है कि ज्येष्ठता के प्रयोजन के लिए वे किन्हीं दो सेवाओं को जोड़े जाने की ईप्सा नहीं करते हैं अपितु, अर्हता के प्रयोजन के लिए, वे न्यायालय में की गई वकालत की अवधि को जोड़ें जाने की ईप्सा करते हैं । यह कुछ नहीं है अपितु एक स्वयंसेवा का तर्क हैं । जैसा कि पहले ही ईंगित किया जा चुका है, याची, फरवरी, 2011 में नियुक्त हुए थे । वे फरवरी, 2021 तक न्यायिक पद में सेवा के 10 वर्ष पूरे कर लेंगे । यह तब है, जब इस न्यायालय ने तारीख 6 दिसम्बर, 2019 को इस रिट याचिका में नोटिस का आदेश दिया, जबकि वे प्रार्थना 'क' को समाप्त करने और प्रार्थना 'ख' तक स्वयं को सीमित रखने के लिए सहमत हो गए थे जो मद्रास उच्च न्यायालय के कालोजियम द्वारा सिफारिश नामों की सूची वापस करने के लिए न्यायोचित है । शायद, याचियों को इस बात की प्रत्याशा थी कि यदि, पहले की गई सिफारिश नामों की सूची वापस की जाती है और मामले को फरवरी, 2021 के पश्चात् नए सिरे से विचार में लिया जाता है तो वे अनुच्छेद 217 के खंड (2) के उपखंड (क) के निबंधनों में अर्ह हो जाएंगे और उस समय वे लड़ने वाले प्रत्यर्थियों पर और उनके ऊपर ज्येष्ठता के फायदों का दावा कर सकते हैं । याचियों के विद्वान् काउंसेल ने प्ररूप समिति द्वारा शब्द 'और है' को अंत: स्थापित

करने के लिए और उक्त सुझाव को नामंजूर करते हुए जो वर्तमान अनुच्छेद 217(2)(ख) के तत्समानी है, संविधान के अनुच्छेद 193(2)(ख) के प्ररूप में तात्पर्यित संशोधनों पर संविधान के प्ररूप समिति में रखे जाने की चर्चा को निर्दिष्ट करते हुए यह, दलील दी है कि उसके प्रकाश में, यह न्यायालय 'वकालत करने वाले अधिवक्ताओं' तक निर्बंधित करने के तरीके में अनुच्छेद 217(2)(ख) का निर्वचन नहीं कर सकता है । याचियों के विद्वान् काउंसेल ने 'भारतीय संविधान की विरचना' के खंड 4 से 'प्ररूपित संविधान पर टिप्पण और सुझाव' के सुसंगत भाग का अवलंब लिया है । उपर्युक्त के आधार पर, यह दलील दी गई कि अनुच्छेद 217(2)(ख) को विचार करने की तारीख पर अधिवक्ताओं के रूप में वकालत करने के अभिप्राय तक ही निर्बंधित नहीं किया जा सकता है । किन्तु, उपर्युक्त तर्क में इस तथ्य का अभाव है कि अनुच्छेद 217(2)(ख) अधिवक्ताओं के स्ट्रीम से संबंधित है जब यह ऐसी स्ट्रीम में आता है तो स्पष्टीकरण (कक) की भूमिका आरंभ हो जाती है । इसलिए, प्ररूप समिति में चर्चाओं के प्रति संदर्भ का कोई सुसंगतता नहीं है । वस्तुत:, वर्तमान स्पष्टीकरण (क) को तारीख 20 जून, 1979 के प्रभाव से संविधान (44वां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा ही अंत:स्थापित किया गया था । उस समय जो स्पष्टीकरण (क) था वही इसके संशोधन के पश्चात् स्पष्टीकरण (कक) हो गया । इसलिए, वर्तमान स्पष्टीकरण (क) का फायदा तारीख 20 जून, 1979 तक न्यायिक अधिकारियों को भी उपलब्ध नहीं था । शब्द 'धारण किया है' और शब्द 'किया गया है', अनुच्छेद 217(2) के अधीन उपखंड (क) और (ख) के साथ ही स्पष्टीकरण (क) और (कक) में बारम्बार दोहराया गया है । न्यायिक सेवा के संवर्ग से व्यक्ति के संबंध में, उपखंड (क) में शब्द 'धारण किया है' का प्रयोग किया गया है किन्तु, अधिवक्ता के संवर्ग से व्यक्ति के संबंध में उपखंड (ख) में किया गया है शब्दों का प्रयोग किया गया है । यह इस कारण से नितांत सुसंगत है कि स्पष्टीकरण (क) और (कक) में भी शब्द 'धारण किया है' को हमेशा ही शब्द 'न्यायिक पद' से आरंभ किया गया है और शब्द 'किया गया है' हमेशा ही शब्द 'अधिवक्ता' से प्रारंभ किया गया है । यह तर्क कि सेवाओं की अवधियों को जोड़ने का

फायदा उस व्यक्ति को मंजूर करना विवेकाधिकार होगा जो न्यायिक पद धारण करता है और बाद में अधिवक्ता हो जाता है, न्यायालय को आकर्षित नहीं करता है । वस्तुतः, अनुच्छेद 217(2) किसी भी व्यक्ति को उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किए जाने के किसी अधिकार की गारंटी नहीं देता है, फिर भी न्यायिक पद धारण करने वाला व्यक्ति बेहतर स्थिति में होता है क्योंकि वह कुछ ऐसे पद पर रहने के पश्चात् जैसे कनवेयर क्षेत्र उसका कैरियर प्रगति (यद्यपि सीमित में) सुनिश्चित होता है । अधिवक्ता के लिए ऐसी कोई सुनिश्चितता नहीं होती है । इसलिए, अनुच्छेद 14 पर आधारित तर्क हमें प्रभावित नहीं करते हैं । यह भी दलील दी गई थी कि कुछ व्यक्तियों जिनके नाम रिट याचिका के पैरा 16 में उल्लिखित हैं, ने जिला न्यायाधीशों के रूप में सेवा के 10 वर्ष की सेवा पूरी किए बिना उच्च न्यायालय में नियुक्तियां प्राप्त कर ली हैं । किन्तु, न्यायालय को यह जानकारी नहीं है कि उन्होंने किस प्रकार न्यायालय में वकालत करने के वर्षों की संख्या को जोड़ते हुए, इस प्रकार नियुक्तियां प्राप्त कर ली है । वास्तविक स्थिति यह है कि उन मामलों में अविभावी प्रक्रिया उपलब्ध नहीं है । उनमें से बहुत से व्यक्तियों ने जिनके नाम रिट याचिका के पैरा 16 में उल्लिखित हैं, संविधान (44वां संशोधन) अधिनियम, 1978 के पूर्व उच्च न्यायालय में नियुक्ति प्राप्त की है । इसलिए, न्यायालय को इस बात की जानकारी नहीं है कि उनके मामले में क्या हुआ है । इसलिए, अंत में, न्यायालय का यह सुविचारित मत है कि रिट याचियों का दावा पूर्णतया कायम रखे जाने योग्य नहीं है और रिट याचिका भ्रांतिपूर्ण है । (पैरा 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30, 31, 32, 33, 34, 35, 36, 37, 38, 39, 43, 46, 47, 48)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2018]	(2018) 4 एस. सी. सी. 619 :	
	धीरज मोर बनाम	
	माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय ;	13,14,15,17,18

[2011] (2011) एस. सी. सी. ऑन लाइन, दिल्ली 1773 :
डी. के. शर्मा बनाम **भारत संघ** ; 40,41

[2009] (2009) 8 एस. सी. सी. 273 :
मुकेश चंद्र गुप्ता बनाम **भारत संघ** ; 40,41,42

[1992] (1992) 2 एस. सी. सी. 428 :
श्री कुमार पदमा प्रसाद बनाम **भारत संघ** । 42

आरंभिक (रिट) अधिकारिता : 2019 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 1172.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 32 के अधीन रिट याचिका ।

पक्षकारों की ओर से सर्वश्री आर. एस. सूरी, अपर महासालिसिटर, राकेश द्विवेदी, आत्मा राम एन. एस. नदकारनी, गुरु कृशनकुमार, विनय नावरे, पी. एस. पटवालिया, एम. अजमल खान, ज्येष्ठ अधिवक्तागण, कौस्तुभ शुक्ला, सुभाषिश भूवमिक, एकलव्य द्विवेदी, अभय सिंह, पीयूष बेरिवाल, (सुश्री) प्रियंका दास, अरविंद कुमार शर्मा, डी. एल. चिदनंदा, सल्वाडोर संतोष रेबेलो, आलोक कुमार पाण्डेय, अश्विन कुमार डी. एस., दिपयान मंडल, अरिंदम घोष, एम. योगेश कन्ना, के. वी. विजय कुमार, अनिश आर. साह, शरण ठाकुर, महेश ठाकुर, सिद्धार्थ ठाकुर, सिद्धार्थ बरुआ, पी. वी. योगेश्वरन, एम. पी. पार्थिबन, पार्थिव के. गोस्वामी, ईसान बिष्ट, (सुश्री) दीक्षा राय, एम. ए. चिन्नास्वामी, (सुश्री) सी. रुबावती, पी. राजाराम, वी.

सेंथिल कुमार, ए. लक्ष्मीनारायणन, (श्रीमती) एल. माहेश्वरी, श्रीराम पराक्कट एम. एस. विष्णु शंकर, (सुश्री) अतिरा जी. नायर, सरत जे., दीपक सिंह, (सुश्री) अनुपमा, श्रीपति के. आर. (मैसर्स लावफिक की ओर से), सेंथिल जगदीसन, (सुश्री) मरिनल कनवर, (सुश्री) सोनाक्षी मल्हान, (सुश्री) श्रुति चौधरी, अधिवक्तागण

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति एस. ए. बोबडे ने दिया ।

मु. न्या. बोबडे – उन व्यक्तियों ने जिन्हें तमिलनाडु राज्य न्यायिक सेवा में गृह विभाग के तारीख 18 फरवरी, 2011 के शासकीय आदेश जी. ओ. एमएस. संख्या 170 के द्वारा प्रत्यक्ष भर्ती के माध्यम से जिला न्यायाधीशों (प्रारंभिक स्तर) के रूप में नियुक्त किया गया था, रिट याचिका के माध्यम से निम्नलिखित अनुतोषों की ईप्सा की है :–

"(क) मद्रास उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के रूप में नियुक्ति के लिए माननीय भारत के मुख्य न्यायाधीश को मद्रास उच्च न्यायालय के माननीय मुख्य न्यायाधीश द्वारा सिफारिश नामों की अंतिम सूची से संबंधित अभिलेखों को प्रस्तुत करने के लिए और उन्हें अभिखंडित करने के लिए जहां तक कि यह इसमें के प्रत्यर्थी सं. 5 से 23 के नामों से संबंधित है, परमादेश की रिट या कोई अन्य समुचित रिट, आदेश या आदेशों, निर्देशों को जारी किया जाए और परिणामतः, मद्रास उच्च न्यायालय के माननीय कालोजियम को उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के रूप में नियुक्त करने के लिए याचियों के नामों पर भी विचार करने का निदेश दिया जाए ।

अथवा,

(ख) माननीय भारत के मुख्य न्यायाधीश को माननीय मद्रास उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश द्वारा सिफारिश मद्रास उच्च

न्यायालय के न्यायाधीशों के रूप में नियुक्ति के लिए नामों के अंतिम सूची को वापस करने के लिए प्रत्यर्थी सं. 1 से 4 को निर्देश देते हुए, परमादेश रिट या कोई अन्य समुचित रिट, आदेश या आदेशों/निर्देशों को जारी किया जाए ।

और

(ग) अन्य कोई ऐसा आदेश या आदेशों को पारित किया जाए जैसा कि यह माननीय न्यायालय मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में ठीक और समुचित समझता है ।"

2. तारीख 6 दिसम्बर, 2019 को इस न्यायालय ने जारी नोटिस को मात्र एक प्रश्न तक निर्बंधित किया । तारीख 6 दिसम्बर, 2019 को पारित आदेश स्वत: स्पष्ट है और अतएव, इसे निम्नलिखित प्रस्तुत किया जाता है :–

"याचियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री राकेश द्विवेदी के निवेदन पर प्रार्थना 'क' को निरस्त करना मंजूर किया जाता है ।

जारी नोटिस को 18 वर्ष पूरे होने को ध्यान में रखते हुए, विचार किए जाने के लिए याचियों के हक के प्रश्न तक निर्बंधित किया जाता है जैसा कि दावा किया गया है ।

इसके अतिरिक्त, दस्ती सेवा की अनुज्ञा दी जाती है ।"

3. हमने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना ।

4. याचियों के साथ ही साथ प्रत्यर्थी सं. 24 से 29 सम्यक् रूप से चयनित थे और गृह विभाग के तारीख 18 फरवरी, 2011 के शासकीय आदेश जी. ओ. एमएस. संख्या 170 द्वारा प्रत्यक्ष भर्ती के माध्यम से जिला न्यायाधीशों (प्रारंभिक स्तर) के रूप में नियुक्त किए गए थे । इसलिए, सुस्पष्टत:, उन्होंने उस तारीख को न्यायिक अधिकारियों के रूप में 10 वर्ष की सेवा पूरी नहीं की थी । किन्तु, जिला न्यायाधीशों के रूप में अपनी नियुक्ति के समय पर तमिलनाडु और पुडुचेरी बार कौंसिल में नामांकन कराने के पश्चात्, याची सं. 1 से 6 ने अधिवक्ताओं के रूप में 10 वर्ष से अधिक की वकालत पहले ही पूरी कर चुके थे, याची सं. 7 ने

9 वर्ष और 10 माह की अधिवक्ता के रूप में वकालत कर चुका था और याची सं. 8 ने 8 वर्ष और 6 माह तक वकालत की थी ।

5. जिला न्यायाधीशों के कैडर में याची और प्रत्यर्थी सं. 25 से 29 ज्येष्ठतम थे जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा निर्मुक्त अधिकारियों की वार्षिक सूची से प्रतीत होता है । प्रत्यक्ष भर्ती में ज्येष्ठता जैसा कि इसमें के याचियों की है, प्रोन्नत व्यक्ति पर मद्रास उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ द्वारा 2014 की रिट याचिका सं. 20069 में दिए गए तारीख 26 फरवरी, 2015 के निर्णय द्वारा भी बल मिलता है ।

6. याचियों की संक्षिप्त शिकायत यह है कि जिला न्यायाधीशों के कैडर में ज्येष्ठतम होने के बावजूद उनकी अनदेखी की गई है और उनके कनिष्ठों को न्यायाधीशों के रूप में उच्च न्यायालय में नियुक्त करने के लिए अब सिफारिश की गई है । याचियों के अनुसार, ऐसा उच्च न्यायालय के कालोजियम द्वारा संविधान, 1950 के अनुच्छेद 217(2) के अधीन स्पष्टीकरण (क) को एकमात्र रूप से लागू करते हुए किया गया है । याचियों की दलील यह है कि एक व्यक्ति की अर्हता अवधारित करते समय, अनुच्छेद 217 के खंड (2) के उपखंड (क) और (ख) के साथ स्पष्टीकरण (क) और (कक) को समान रूप से लागू करना चाहिए ।

7. साधारण निबंधनों में, याचियों ने ईप्सा की है कि उनकी अर्हता अवधारिता करते समय, उनके द्वारा अधिवक्ताओं के रूप में अर्जित अनुभव को न्यायिक अधिकारियों के रूप में उनके द्वारा की गई सेवा के साथ जोड़ा जाना चाहिए । एक बार जब इसे जोड़ा जाना मंजूर कर लिया जाता है तो याचियों की जिला न्यायाधीशों के कैडर में ज्येष्ठता की प्रास्थिति का लाभ सुस्थिर हो जाता है जिससे उनकी ज्येष्ठता प्रत्यर्थी सं. 5 से 23 के ऊपर जाती है । दूसरे शब्दों में, याचियों ने सभी से बेहतर होने की ईप्सा की है ।

8. आगे कार्यवाही करने के पूर्व, हम यह उल्लेख करना चाहते हैं कि प्रत्यर्थी सं. 5 से 23 जिला न्यायाधीशों के नीचे कैडर में न्यायिक अधिकारियों के रूप में नियुक्त हुए थे । लंबी सेवा के पश्चात् उन्होंने

जिला न्यायाधीशों के पद पर प्रोन्नति प्राप्त की थी । किन्तु, उनकी प्रोन्नति उस तारीख को हुई थी जिस तारीख को याचियों की जिला न्यायाधीशों के रूप में प्रत्यक्ष भर्ती हुई थी । इसलिए, क्यों और कैसे याची, प्रत्यर्थी सं. 5 से 23 से ज्येष्ठ हो गए हैं ।

9. जब राज्य न्यायिक अधिकारियों में से भरने के लिए नियत कोटा 1/3 के विरुद्ध न्यायाधीशों के रूप में उच्च न्यायालय में नियुक्ति के लिए नियुक्तियां उद्भूत हुई थी तब उच्च न्यायालय के कालोजियम ने यह पाया कि याचियों ने अनुच्छेद 217 (2)(क) द्वारा यथाअपेक्षित न्यायिक अधिकारी के रूप में 10 वर्ष की सेवा पूरी नहीं की थी । इसलिए, उच्च न्यायालय के कालोजियम ने उन व्यक्तियों के नामों की सिफारिश की थी जो अर्हता मानदंड को पूरा करते थे । उच्च न्यायालय के कालोजियम की ओर से की गई इस कार्रवाई से व्यथित होकर याचियों ने यह रिट याचिका फाइल की है ।

10. रिट याचिका में याचियों द्वारा उद्भूत दलीलें, याचियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री राकेश द्विवेदी द्वारा किए गए निवेदनों से थोड़ा भिन्न है । सर्वप्रथम हम, रिट याचिका में उद्भूत दलीलों पर विचार करते हैं ।

11. याचियों ने अपने अभिवचनों में निम्नलिखित आधारों पर अपना दावा किया है :–

(i) अनुच्छेद 217 के खंड (2) के उपखंड (क) और (ख) तथा उनके अधीन स्पष्टीकरण (क) और (कक) का समेकित रूप से परिशीलन किया जाना चाहिए,

(ii) पी. रामाकृष्णम् राजू **बनाम** भारत संघ [(2014) 12 एस. सी. सी. 1] में, इस न्यायालय के विनिश्चय में, इस न्यायालय ने पेंशन संबंधी फायदों के लिए अर्हता सेवा का अवधारण करने में, अधिवक्ता के रूप में वकालत के वर्षों की संख्या को उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में की गई सेवा के संख्या में जोड़े जाने का निर्देश दिया था, और

(iii) धीरज मोर **बनाम** माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय [(2018) 4 एस. सी. सी. 619] वाले मामले में, 3 सदस्यों के न्यायपीठ में इस न्यायालय के खंड न्यायपीठ द्वारा इस प्रश्न पर निर्देश किया गया था कि क्या अनुच्छेद 233 के प्रयोजनों के लिए जिला न्यायाधीश के पद पर प्रत्यक्ष भर्ती के लिए अर्हता अवधारित करने हेतु, एक अधिवक्ता के रूप में वकालत के वर्षों की संख्या को न्यायिक अधिकारी के रूप में सेवा के वर्षों के साथ जोड़ा जा सकता है ।"

12. आरंभ में ही हमें यह इंगित करना होगा कि **पी. रामाकृष्णम् राजू** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में, अधिकथित विनिश्चयाधार, वर्तमान मामले के विवाद्यक में लागू नहीं होता है । उक्त विनिश्चय, उच्च न्यायालयों के न्यायपीठों में अधिवक्ताओं की नियुक्ति के संदर्भ में दिया गया था न कि सेवा निवृत्तिक फायदों के निबंधनों में समुचित तौर पर प्रतिकर देने के संदर्भ में दिया गया था जब वे कम से कम सेवा के 7 वर्ष/10 वर्ष/14 वर्ष से अधिक की सेवा करने के पश्चात् सेवानिवृत्त हुए थे । हम, उस विनिश्चयाधार को उच्च न्यायालय में न्यायाधीशों के रूप में नियुक्ति के लिए एक व्यक्ति की अर्हता पर विचार करते समय लागू नहीं कर सकते हैं ।

13. **धीरज मोर** बनाम **माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय**[2] वाले मामले में, दिए गए निर्देश पर रिट याचिका के आधार पी में रिट याचियों द्वारा लिए गए अवलंब का उनके लिए किसी भी प्रकार से उपयुक्त नहीं है । यह इस साधारण कारण से है कि तारीख 19 फरवरी, 2020 के निर्णय द्वारा इस न्यायालय के तीन सदस्यों वाले न्यायपीठ ने संदर्भ का उत्तर दिया है जिसमें सभी प्रकार से याचियों के तर्कों को अस्वीकार कर दिया गया था ।

14. **धीरज मोर** (उपर्युक्त) वाले मामले में, प्रत्यक्ष भर्ती के माध्यम से जिला न्यायाधीशों के पद में नियुक्ति के लिए दावा करने वाले तीन प्रवर्ग के व्यक्ति थे । (1) वे, वे व्यक्ति थे जिन्होंने अधिवक्ता के रूप

---

[1] (2014) 12 एस. सी. सी. 1.

[2] (2018) 4 एस. सी. सी. 619.

में 7 वर्ष की वकालत की थी किन्तु वे आवेदन/नियुक्ति की तारीख पर न्यायिक कार्यालय में सेवा कर रहे थे, (2) वे, वे व्यक्ति थे जिन्होंने न्यायिक अधिकारियों के रूप में 7 वर्ष से अधिक सेवा पूरी कर ली थी किन्तु उनके पास न्यायालय में वकालत करने का 7 वर्ष का अनुभव नहीं था और (3) वे व्यक्ति थे जो अर्हता मापदंड के प्रयोजन के लिए अधिवक्ता के रूप में वकालत के वर्षों की संख्या को न्यायिक अधिकारी के रूप में सेवा के वर्षों के साथ जोड़ना चाहते थे । इस न्यायालय के विभिन्न न्यायपीठों द्वारा पूर्ववर्ती मामलों में अभिव्यक्त भिन्न मतों को उल्लिखित करने के पश्चात्, इस न्यायालय के खंड न्यायपीठ ने मामले को बृहत्तर न्यायपीठ के समक्ष रखने का निर्देश देते हुए, तारीख 23 जनवरी, 2018 को एक आदेश पारित किया ।

15. इसमें के याचियों ने सितम्बर, 2019 में वर्तमान रिट याचिका फाइल की थी । उस तारीख को जिस तारीख को याचियों ने रिट याचिका फाइल की थी और उस तारीख को जिस तारीख को अर्थात् तारीख 6 दिसम्बर, 2019 को रिट याचिका विचार में लाया गया था, उस तारीख तक **धीरज मोर** (उपर्युक्त) वाले मामले में, किया गया निर्देश लंबित था । इसलिए, प्रश्न उस तारीख को उद्भूत हुआ था जब इस न्यायालय ने वर्तमान रिट याचिका में नोटिस देने का आदेश दिया था ।

16. किन्तु, पश्चात्वर्ती तौर पर, निर्देश का उत्तर, तारीख 19 फरवरी, 2020 को इस न्यायालय के तीन सदस्यों की न्यायपीठ द्वारा दिया गया था । तीन सदस्यों की न्यायपीठ द्वारा अधिकथित सिद्धांत निम्नलिखित है :-

> "(i) अनुच्छेद 233(2) के प्रयोजन के लिए, एक अधिवक्ता की नियत तारीख तक और जिला न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के समय पर भी अधिवक्ता के रूप में कम से कम 7 वर्ष की निरंतर वकालत होनी चाहिए । 7 वर्ष की सेवा का अनुभव रखने वाले न्यायिक सेवा के सदस्य, जब वे पदग्रहण करते हैं या जो अधिवक्ता और न्यायपालिका के सदस्य के रूप में 7 वर्षों का संयुक्त अनुभव रखते हैं, जिला न्यायाधीश के रूप में प्रत्यक्ष भर्ती के लिए आवेदन करने हेतु अर्ह नहीं है, और

(ii) विजय कुमार मिश्रा **बनाम** पटना उच्च न्यायालय [(2016) 9 एस. सी. सी. 313] वाले मामले में, दिया गया विनिश्चय जिसमें प्रत्यक्ष भर्ती के माध्यम से जिला न्यायाधीश के पद के लिए आवेदन करने के लिए न्यायिक अधिकारियों की अर्हता को कायम रखा गया था, सही विधि अधिकथित नहीं करता है अतएव, उसे उलटा जाता है ।"

17. इसलिए, अनुच्छेद 233 के प्रयोजन के लिए **धीरज मोर** (उपर्युक्त) वाले मामले में, अधिकथित विधि के प्रकाश में भर्ती के दो स्वतंत्र स्ट्रीमों के बीच एक साथ आने और जाने वाले लोगों के लिए यह किसी भी प्रकार से अनुज्ञेय नहीं है । अतएव, याचियों द्वारा अपने अभिवचनों में ऐसा निर्देश का लिया गया अवलंब जो उस समय **धीरज मोर** (उपर्युक्त) वाले मामले में, लंबित था, असंगत हो जाता है ।

18. यद्यपि, **धीरज मोर** (उपर्युक्त) वाला मामला, संविधान के अनुच्छेद 233 से संबंधित था जिसमें न्यायमूर्ति एस. रविन्द्र भट्ट ने पृथक् रूप से पैरा 34 में भिन्नता की ओर ध्यान आकर्षित किया था किन्तु अनुच्छेद 217 जिससे वर्तमान मामले में हमारा संबंध है, के बारे में **धीरज मोर** (उपर्युक्त) वाले मामले में समवर्ती राय पैरा 34 में व्यक्त किया गया था जो इस प्रकार है :-

"34. इस मत की अनुच्छेद 217(2) द्वारा पुष्टि होती है जिससे दो स्रोत निकलते हैं जिससे नियुक्तियां, उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की प्रास्थिति के लिए प्रतिस्थापित की जा सकती है : प्रथमत:, राज्य की न्यायिक सेवा की सदस्य [अनुच्छेद 217(क)] और 10 वर्ष की वकालत करने का अनुभव रखने वाला अधिवक्ता [अनुच्छेद 217(ख)] । उच्चतम न्यायालय के लिए अनुच्छेद 124(3)(क) उस व्यक्ति पर विचार करने के लिए सशक्त करता है जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में 5 वर्ष अनुभव रखता है, अनुच्छेद 124(3)(ख) उस व्यक्ति पर विचार करने के लिए सशक्त करता है जो किसी उच्च न्यायालय में 10 वर्ष की वकालत करने का अनुभव रखने वाला अधिवक्ता, अनुच्छेद 124(3)(ग) ख्यातिप्राप्त न्यायविद् को विचार में लेने के लिए

सशक्त करता है । महत्वपूर्ण तौर पर, न्यायालय में नियत अनुभव रखने वाले अधिवक्ता, संविधान में अभिव्यक्त उपबंधों [अनुच्छेद 233(2), अनुच्छेद 217(ख) और अनुच्छेद 124(3)(ख)] के अधीन क्रमश: जिला न्यायालयों, उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में नियुक्ति के लिए विचार किए जाने के हकदार होते हैं । तथापि, न्यायिक सेवा के सदस्यों को क्रमश:, जिला न्यायाधीशों के रूप में और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के रूप में ही मात्र नियुक्ति (प्रोन्नति द्वारा) के लिए विचार किया जा सकता है । न्यायिक सेवा के सदस्यों को उच्चतम न्यायालय में नियुक्ति के लिए विचार नहीं किया जा सकता है । इसी प्रकार, शिक्षाविद् या ख्यातिप्राप्त न्यायवेत्ता जिन्होंने न तो न्यायालय में वकालत की है न ही उनका न्यायिक सेवा में कोई अनुभव है, को जिला न्यायाधीश के रूप में या उच्च न्यायालय न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए विचार किया जा सकता है ।"

19. इसलिए, वह आधार ही जिस पर याचियों ने कम से कम अपने अभिवचनों में अपने मामले को स्थापित किया है अब समाप्त हो गया है । किन्तु, याचियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री राकेश द्विवेदी ने यह दलील दी है कि :-

"(i) अनुच्छेद 217 का खंड (1) उस व्यक्ति की नियुक्ति का तरीका और आयु विहित करता है जो नियुक्त व्यक्ति पदधारण कर सकता है, खंड (2) मात्र ऐसी नियुक्ति के अर्हता और ऐसी अर्हता की संगणना का तरीका विहित करता है ।

(ii) अनुच्छेद 217 के खंड (2) का उपखंड (क) और (ख) में विहित अर्हताएं वैकल्पिक हैं, किन्तु, अनुच्छेद 217 ऐसे तरीके के लिए स्वतंत्र कोटा के साथ नियुक्ति के लिए कोई पृथक् तरीका सृजित नहीं करता है ।

(iii) स्पष्टीकरण (क) का इस तरीके से निर्वचन किया जा सकता है कि मात्र वह व्यक्ति जो न्यायिक सेवा से त्यागपत्र दे चुका है और एक अधिवक्ता हो गया है, वह व्यक्ति ही दोनों अवधियों को जोड़ने के लिए अर्ह होगा जिसका परिणाम अनुचित

होगा और अनुच्छेद 14 का अतिलंघन करते हुए, न्यायिक अधिकारियों के साथ प्रतिकूल विभेद करता है और अतएव, ऐसा निर्वचन को शून्य हो जाता है और

(iv) ऐसे कई पूर्व-निर्णय हैं जहां उन जिला न्यायाधीशों को जिन्होंने 10 वर्ष की सेवा पूरी नहीं की थी, न्यायिक सेवा में उनके द्वारा किए गए सेवा के वर्षों की संख्या के साथ न्यायालय में उनके द्वारा की गई वकालत के वर्षों के साथ जोड़ते हुए उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के रूप में नियुक्त किया गया था ।"

20. उपर्युक्त निवेदनों पर विचार करने के पूर्व हमें संविधान, 1950 के अनुच्छेद 217(2) के उपबंधों को देखना होगा, जो इस प्रकार हैं :-

"(2) कोई व्यक्ति, किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए तभी अर्हित होगा जब वह भारत का नागरिक है और -

(क) भारत के राज्यक्षेत्र में कम से कम दस वर्ष तक न्यायिक पद धारण कर चुका है ; या

(ख) किसी उच्च न्यायालय का या ऐसे दो या अधिक न्यायालयों को लगातार कम से कम दस वर्ष तक अधिवक्ता रहा है ;

स्पष्टीकरण - इस खंड के प्रयोजनों के लिए -

(क) भारत के राज्यक्षेत्र में न्यायिक पद धारण करने की अवधि की संगणना करने में वह अवधि भी सम्मिलित की जाएगी जिसके दौरान कोई व्यक्ति न्यायिक पद धारण करने के पश्चात् किसी उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहा है या उसने किसी अधिकरण के सदस्य का पद धारण किया है अथवा संघ या राज्य के अधीन कोई ऐसा पद धारण किया है जिसके लिए विधि का विशेष ज्ञान अपेक्षित है ;

(कक) किसी उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहने की अवधि की संगणना करने में वह अवधि भी सम्मिलित की जाएगी जिसके

दौरान किसी व्यक्ति ने अधिवक्ता होने के पश्चात् न्यायिक पद धारण किया है या किसी अधिकरण के सदस्य का पद धारण किया है अथवा संघ या राज्य के अधीन कोई ऐसा पद धारण किया है जिसके लिए विधि का विशेष ज्ञान अपेक्षित है ;

(ख) भारत के राज्यक्षेत्र में न्यायिक पद धारण करने या किसी उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहने की अवधि की संगणना करने में इस संविधान के प्रारंभ से पहले की वह अवधि भी सम्मिलित की जाएगी जिसके दौरान किसी व्यक्ति ने, यथास्थिति, ऐसे क्षेत्र में जो 15 अगस्त, 1947 से पहले भारत शासन अधिनियम, 1935 में परिभाषित भारत में समाविष्ट था, न्यायिक पद धारण किया है या वह ऐसे किसी क्षेत्र में किसी उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहा है ।"

21. अनुच्छेद 217 की भाषा से, यह स्पष्ट है कि खंड (1) मात्र नियुक्ति का तरीका और वह आयु विहित करता है जिस आयु तक नियुक्त व्यक्ति पद धारण कर सकता है । खंड (2) में दो चीजें हैं । प्रथमतः, यह खंड (2) के उपखंड (क) और (ख) के अधीन नियुक्ति के लिए अर्हता अनुध्यात करता है । उसके बाद यह स्पष्टीकरण के दो भागों के अधीन ऐसे अर्हता की गणना का तरीका अनुध्यात करता है ।

22. वस्तुतः, अनुच्छेद 17 के खंड (2) के 2 भाग हैं, जिसका प्रथम भाग उपखंड (क) और (ख) हैं और द्वितीय, स्पष्टीकरण (क) और (कक) है । प्रथम, उस साधारण निबंधनों को उपदर्शित करता है जो नियुक्ति के लिए अर्हता होना चाहिए, व्यक्ति को (i) भारत का नागरिक होना चाहिए और (ii) या तो कम से कम 10 वर्ष तक न्यायिक पद धारण किया जाना चाहिए या 10 वर्ष तक उच्च न्यायालय के अधिवक्ता के रूप में कार्य किया जाना चाहिए ।

23. मान लिया जाए कि अनुच्छेद 217 के खंड (2) के अधीन कोई 'स्पष्टीकरण' नहीं हो तो उसके बाद ऐसे किसी तर्क के लिए कोई जगह नहीं बचती है, यह आंख मूंद कर स्वीकार करने के अलावा कि अनुच्छेद 217 के खंड (2) में अनुध्यात अर्हता 2 पृथक् स्रोतों अर्थात् (i) न्यायालय से या (ii) न्यायिक सेवा से जैसा कि अनुच्छेद 236 के खंड

(ख) में परिभाषित है, से एक व्यक्ति द्वारा अर्जित किया जा सकता है । यह इस कारण से है कि उपखंड (क) और (ख) वस्तुत: वैकल्पिक है जैसा कि उनके बीच प्रयुक्त शब्द 'या' से प्रतीत होता है । मरियम वेबस्टर डिक्शनरी के अनुसार, अंग्रेजी ग्रामर में शब्द 'या' का अभिप्राय 'समन्वय सहयोजन' से है । जबकि शब्द 'और' जो भी एक सहयोजन है समेकित रूप से कुछ और जोड़ने के अभिप्राय में है, शब्द 'या' वैकल्पिक तौर पर कुछ और जोड़ने के अभिप्राय में है । जहां तक खंड (2) के प्रथम भाग का संबंध है, जैसा कि पूर्ववर्ती कथित है, खंड (2) का प्रथम भाग उपखंड (क) और (ख) में है ।

24. अनुच्छेद 217 के खंड (2) का द्वितीय भाग जिसे 'स्पष्टीकरण' के प्ररूप में लिया गया है मात्र उन तरीकों को स्पष्ट करता है जिनमें उपखंड (क) और (ख) में उपदर्शित अवधियों का अर्थान्वयन किया जाता है । रुचिकर तौर पर अनुच्छेद 217 के खंड (2) के अधीन स्पष्टीकरण के भी 2 भाग हैं । एक उपखंड (क) में दिया गया है और दूसरा उपखंड (ख) में दिया गया है ।

25. स्पष्टीकरण (क) उपखंड (क) के साथ है और स्पष्टीकरण (कक) उपखंड (ख) के साथ है । यह इस कारण से है कि स्पष्टीकरण (क) न्यायिक अधिकारियों की सेवा की वर्षों की संख्या में अतिरिक्त कुछ अतिरिक्त वर्षों को भी जोड़ने की अनुज्ञा देता है अर्थात् (i) वह अवधि जिसके दौरान कोई व्यक्ति उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहा है या (ii) वह अवधि जिसके दौरान कोई व्यक्ति अधिकरण के सदस्य के रूप में पद धारण किया हो । इसी प्रकार, स्पष्टीकरण (कक) उन अतिरिक्त अवधियों के वर्षों को जोड़ने की अनुज्ञा देता है जिसके दौरान कोई व्यक्ति उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहा है, कुछ अन्य अवधि अर्थात् वह अवधि जिसके दौरान वह कोई न्यायिक पद धारण किया हो या अधिकरण के सदस्य के रूप में पद धारण किया हो ।

26. स्पष्टीकरण (क) के अनुसार, न्यायिक पद धारण करने की अवधि की संगणना में वह अवधि भी सम्मिलित की जाएगी जिसके दौरान कोई व्यक्ति किसी उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहा है ।

27. किन्तु, स्पष्टीकरण (क) के अधीन कुछ अन्य अवधि को ऐसे जोड़ने की शर्त यह है कि ऐसी अन्य अवधि का न्यायिक सेवा में अनुसरण किया जाना चाहिए न कि पूर्वोदाहरण के रूप में लिया जाना चाहिए । इसे 'उसने कोई न्यायिक पद धारण किया है, के पश्चात्' शब्दों के प्रयोग द्वारा स्पष्ट किया गया है ।

28. इसमें के याचियों द्वारा यह ईप्सा की गई है कि उनकी न्यायिक सेवा की अवधि में उनके उस अनुभव को भी जोड़ा जाए जिसे वे न्यायिक सेवा ग्रहण करने के पूर्व न्यायालय में अधिवक्ता के रूप में कार्य किया है । दूसरे शब्दों में, याचियों ने यह ईप्सा की है कि शब्द 'पश्चात्' का निर्वचन इस अभिप्राय में किया जाए और उसमें 'पूर्व' सम्मिलित किया जाए । हम, निर्वचन का ऐसा कोई नियम नहीं जानते हैं जो शब्द 'पश्चात्' का निर्वचन इस अभिप्राय में किया जाता है जिसमें 'पूर्व' सम्मिलित हो ।

29. अनुच्छेद 217 के खंड (2) के उपखंड (क) और (ख) में स्पष्टीकरण (क) और (कक) की सूक्ष्म परीक्षा से यह दर्शित होता है कि एक व्यक्ति इस प्रकार अर्हता अर्जित कर सकता है जैसा कि अनुच्छेद 217 में उपदर्शित है –

> (i) या तो अनन्य तौर पर न्यायालय से [जैसा कि उपखंड (ख) में उपबंधित है], (ii) या अनन्य तौर पर न्यायिक सेवा से [जैसा कि खंड (क) में उपबंधित है], (iii) या दोनों समूहों से [जैसा कि स्पष्टीकरण (क) और (कक)] में उपबंधित है ।

30. किन्तु, यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि अनुच्छेद 217(2), मात्र अर्हता मानदंड और उसकी संगणना का तरीका विहित करता है । यदि कोई व्यक्ति, अर्हता मानदंड को पूरा करना पाया जाता है तो उसे पंक्तियों में से एक पंक्ति में उसकी नियुक्ति होनी चाहिए । 2 पृथक् पंक्तियां हैं, एक न्यायिक सेवा से और दूसरा न्यायालय में वकालत करने से । किसी व्यक्ति को नियुक्ति के लिए उसके नाम पर विचार करने की तारीख पर उसकी प्रास्थिति और उसी समय अन्य पंक्ति में मुखौटा ओढ़ने वाले व्यक्ति को ध्यान में रखते हुए, नियुक्त नहीं किया

जा सकता है जिससे कि वह दोनों में से किसी पंक्ति से या दोनों के संयोजन से विचार के जोन के भीतर दावा कर सकता है ।

31. पंक्ति जिससे कोई व्यक्ति समनुदेशित है, विचार की तारीख पर उसकी प्रास्थिति पर निर्भर करता है । यदि कोई व्यक्ति, विचार की तारीख पर एक अधिवक्ता है तो वह न्यायालय के सदस्यों के लिए अभिप्रेत पंक्ति में से ही अपना स्थान ले सकता है, यदि कोई व्यक्ति, विचार की तारीख पर न्यायिक अधिकारी है तो वह सेवा अभ्यर्थी के लिए अभिप्रेत पंक्ति में से ही अपना अवसर लेगा ।

32. एक पंक्ति से दूसरे पंक्ति में एक साथ आना और जाना अनुज्ञेय नहीं है । आज की तारीख पर यदि याचियों में से कोई न्यायिक अधिकारियों के रूप में नहीं रह जाता है और अधिवक्ता हो जाता है तो वह न्यायालय में वकालत करने के लिए आशयित कोटा के विरुद्ध विचार किए जाने के लिए अर्ह हो सकता है । किन्तु, न्यायिक अधिकारियों के रूप में निरंतर कार्य करते हुए, वे स्पष्टीकरण 'क' का अवलंब नहीं ले सकते हैं क्योंकि यह मात्र उन व्यक्तियों को लागू होता है जो न्यायिक पद धारण करने के पश्चात् अधिवक्ता हो गए हैं ।

33. विवाद्यक को एक अन्य दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है । याचियों ने लड़ने वाले प्रत्यर्थियों पर और उनके ऊपर सफलतापूर्वक दावा किया है और ज्येष्ठता अर्जित कर ली है, इस आधार पर कि लड़ने वाले प्रत्यर्थियों को जिला न्यायाधीश के रूप में प्रोन्नति प्राप्त करने के पूर्व ही उनकी जिला न्यायाधीशों के पद पर प्रत्यक्ष तौर पर भर्ती हो गई थी । दूसरे शब्दों में, ज्येष्ठता के प्रयोजन के लिए याचियों ने जिला न्यायाधीशों के कैडर में भर्ती की तारीख तक अनन्य रूप से अर्हता प्राप्त कर ली थी और न कि न्यायिक सेवा में संपूर्ण सेवा की अवधि द्वारा या (ii) न्यायालय में वकालत करने के वर्षों की संख्या और न्यायिक सेवा के वर्षों की संख्या के संयोजन द्वारा । किन्तु, अर्हता अवधारित करने के प्रयोजन के लिए उन्हें एक अधिवक्ता के रूप में वकालत करने की संपूर्ण अवधि और न्यायिक पद में सेवा करने की अवधि द्वारा प्राप्त करने की ईप्सा थी । यदि जोड़ने की अनुज्ञा दी जाती है तो लड़ने वाले प्रत्यर्थियों

को भी अनुज्ञा दी जानी चाहिए जिसे यदि किया जाता है तो याचियों की ज्येष्ठता भी गड़बड़ा जाएगी ।

34. यद्यपि, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री राकेश द्विवेदी ने यह निवेदन किया है कि उनके मुवक्किलों को लड़ने वाले प्रत्यर्थियों को भी जोड़ने का फायदा मंजूर करने में कोई आक्षेप नहीं हो सकता है, हमारा यह विचार है कि यह सुविधा के लिए एक तर्क है । सेवा कोटा के अधीन रिक्तियों को भरने के लिए, उच्च न्यायालयों के कालोजियम, न्यायिक अधिकारियों के एसीआर और उनके निर्णयों पर 1:3 या 1:5 या इसी प्रकार से विचार करते हैं । इसी प्रकार का कार्य करते हुए, उच्च न्यायालयों द्वारा न्यायिक अधिकारियों की ज्येष्ठता सूचियों को कायम रखा जाता है । यदि, 3 रिक्तियों को भरना होता है तो 9 या 15 ज्येष्ठतम अधिकारियों की प्रोफाइल पर विचार किया जाता है । यदि याचियों के तर्क को स्वीकार कर लिया जाता है तो वे दोनों न्यायालय और सेवा में सेवा की संपूर्ण संख्या के निबंधनों में याचियों से अत्यधिक ज्येष्ठ हो जाएंगे । ऐसी दशा में, याची किसी भी प्रकार से विचार जोन (प्रथम 9 या 5 के भीतर) के आस-पास भी नहीं आ पाएंगे । प्रत्येक राज्य में कम से कम 100 न्यायिक अधिकारी अर्हता मापदंड को पूरा करेंगे, यदि याचियों के तर्क को स्वीकार कर लिया जाता है । वर्तमान मामले को लेते हैं, जहां एक व्यक्ति न्यायालय में 10 वर्ष की वकालत करने के पश्चात्, जिला न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया जाता है । यदि, याचियों की दलील स्वीकार कर ली जाती है तो ऐसे व्यक्ति जिला न्यायाधीश के रूप में अपनी नियुक्ति के एक दिन से ही अर्ह हो जाएंगे । चूंकि, ऐसे सभी व्यक्तियों को रिक्तियों की सीमित संख्या के कारण विचार नहीं किया जा सकता है, इसलिए, ज्येष्ठता सूची कायम रखी जाती है और अधिकारियों की एक विशिष्ट संख्या को विचार जोन में लिया जाता है जो कि कोटा के अधीन भरे जाने के लिए ईप्सित रिक्तियों की संख्या पर निर्भर करती है । याचियों के तर्क का सार यह है कि ज्येष्ठता के प्रयोजन के लिए वे किन्हीं दो सेवाओं को जोड़े जाने की ईप्सा नहीं करते हैं अपितु, अर्हता के प्रयोजन के लिए, वे न्यायालय में की गई वकालत की अवधि को जोड़े जाने की ईप्सा करते हैं । यह कुछ नहीं है अपितु एक स्वयंसेवा का तर्क है ।

35. जैसा कि पहले ही इंगित किया जा चुका है, याची, फरवरी, 2011 में नियुक्त हुए थे । वे फरवरी, 2021 तक न्यायिक पद में सेवा के 10 वर्ष पूरी कर लेंगे । यह तब है, जब इस न्यायालय ने तारीख 6 दिसम्बर, 2019 को इस रिट याचिका में नोटिस का आदेश दिया, जबकि वे प्रार्थना 'क' को समाप्त करने और प्रार्थना 'ख' तक स्वयं को सीमित रखने के लिए सहमत हो गए थे जो मद्रास उच्च न्यायालय के कालोजियम द्वारा सिफारिश नामों की सूची वापस करने के लिए न्यायोचित है । शायद, याचियों को इस बात की प्रत्याशा थी कि यदि, पहले की गई सिफारिश नामों की सूची वापस की जाती है और मामले को फरवरी, 2021 के पश्चात् नए सिरे से विचार में लिया जाता है तो वे अनुच्छेद 217 के खंड (2) के उपखंड (क) के निबंधनों में अर्ह हो जाएंगे और उस समय वे लड़ने वाले प्रत्यर्थियों पर और उनके ऊपर ज्येष्ठता के फायदों का दावा कर सकते हैं ।

36. याचियों के विद्वान् काउंसेल ने प्ररूप समिति द्वारा शब्द 'और है' को अंत:स्थापित करने के लिए और उक्त सुझाव को नामंजूर करते हुए जो वर्तमान अनुच्छेद 217(2)(ख) के तत्समानी है, संविधान के अनुच्छेद 193(2)(ख) के प्ररूप में तात्पर्यित संशोधनों पर संविधान के प्ररूप समिति में रखे जाने की चर्चा को निर्दिष्ट करते हुए यह, दलील दी है कि उसके प्रकाश में, यह न्यायालय 'वकालत करने वाले अधिवक्ताओं' तक निर्बंधित करने के तरीके में अनुच्छेद 217(2)(ख) का निर्वचन नहीं कर सकता है । याचियों के विद्वान् काउंसेल ने 'भारतीय संविधान की विरचना' के खंड 4 से 'प्ररूपित संविधान पर टिप्पण और सुझाव' के निम्नलिखित सुसंगत भाग का अवलंब लिया है :-

> "भारतीय विधि पुनर्विलोकन के संपादक और कलकत्ता न्यायालय के कुछ अन्य सदस्यों ने यह सुझाव दिया है कि अनुच्छेद 193 के खंड (2) के उपखंड (ख) में शब्द 'वर्षों' के पश्चात् शब्द 'और है' को अंत:स्थापित किया जाना चाहिए ।
>
> **टिप्पण** : यह संशोधन, अनुच्छेद 193 के खंड (2) के उपखंड (ख) के अधीन उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की भर्ती में वकालत करने वाले मात्र अधिवक्ताओं तक ही निर्बंधित करने की ईप्सा की

गई है । यदि यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है तो कोई व्यक्ति जिसने सात या आठ वर्षों से जिला न्यायाधीश के रूप में सेवा की है और जिला न्यायाधीश होने के पूर्व सात या आठ वर्षों से उच्च न्यायालय में एक अधिवक्ता के रूप में वकालत भी की है तो वह उच्च न्यायालय न्यायाधीश के रूप में नियुक्त होने के लिए अर्ह नहीं होगा जबकि वह व्यक्ति जो प्रांतीय न्यायिक सेवा का सदस्य है, जिसने मात्र दस वर्ष के लिए 'मुंशिफ' के रूप में सेवा की है, इस प्रकार, नियुक्त होने के लिए अर्ह होगा, जो निश्चित तौर पर विषमता है । इसलिए, इस संशोधन को स्वीकार नहीं किया जा सकता है ।"

37. उपर्युक्त के आधार पर, यह दलील दी गई कि अनुच्छेद 217(2)(ख) को विचार करने की तारीख पर अधिवक्ताओं के रूप में वकालत करने के अभिप्राय तक ही निर्बंधित नहीं किया जा सकता है ।

38. किन्तु, उपर्युक्त तर्क में इस तथ्य का अभाव है कि अनुच्छेद 217(2)(ख) अधिवक्ताओं के स्ट्रीम से संबंधित है जब यह ऐसी स्ट्रीम में आता है तो स्पष्टीकरण (कक) की भूमिका आरंभ हो जाती है । इसलिए, प्ररूप समिति में चर्चाओं के प्रति संदर्भ का कोई सुसंगतता नहीं है ।

39. वस्तुतः, वर्तमान स्पष्टीकरण (क) को तारीख 20 जून, 1979 के प्रभाव से संविधान (44वां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा ही अंतःस्थापित किया गया था । उस समय जो स्पष्टीकरण (क) था वही इसके संशोधन के पश्चात् स्पष्टीकरण (कक) हो गया । इसलिए, वर्तमान स्पष्टीकरण (क) का फायदा तारीख 20 जून, 1979 तक न्यायिक अधिकारियों को भी उपलब्ध नहीं था ।

40. याचियों के विद्वान् काउंसेल ने अपनी इस दलील के समर्थन में, **मुकेश चंद्र गुप्ता** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में, इस न्यायालय के विनिश्चय और **डी. के. शर्मा** बनाम **भारत संघ**[2] वाले मामले में, दिल्ली उच्च न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लिया कि एक

---

[1] (2009) 8 एस. सी. सी. 273.

[2] (2011) एस. सी. सी. ऑन लाइन, दिल्ली 1773.

अधिवक्ता के रूप में वकालत करने का हक, अनुच्छेद 217(2) के अधीन मानदंड को पूरा करने के लिए पर्याप्त है और यह कि उपबंध, वास्तविक वकालत करना अनुध्यात नहीं करता है ।

41. किन्तु, दोनों विनिश्चय, उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के रूप में आयकर अपील अधिकरण के सदस्यों की नियुक्ति को चुनौती देने से उद्भूत हुए थे । ये विनिश्चय, न्यायिक पद धारण करने वाले व्यक्ति के मामले में लागू नहीं किए जा सकते हैं । **महेश चंद्र गुप्ता** (उपर्युक्त) वाला मामला ऐसा था जिसमें इलाहाबाद उच्च न्यायालय के अपर न्यायाधीश के रूप में आयकर अपील अधिकरण के सदस्यों की नियुक्ति को चुनौती दी गई थी । जैसा कि रिपोर्ट के पैरा 38 से प्रतीत होता है कि उक्त मामले में इस न्यायालय को यह विचार किया जाना था कि 'क्या वकालत के अधिकार के विरुद्ध वास्तविक वकालत करना, अनुच्छेद 217(2)(ख) के अधीन अर्हता मापदंड की पूर्व अपेक्षित सांविधानिक अपेक्षा है' । अनुच्छेद 217 के खंड (2) का उपखंड (ख) एक व्यक्ति के वर्षों की संख्या विहित करता है जो विचार के लिए अर्ह होने के लिए एक अधिवक्ता के पास होना चाहिए । इसलिए, यदि याची न्यायिक अधिकारियों के रूप में अपनी वर्तमान प्रास्थिति के होते हुए अधिवक्ता के रूप में संवर्ग से विचार करने की ईप्सा करते हैं तो वे हमेशा ही ऐसा कर सकते हैं परंतु, वे न्यायिक अधिकारियों के आशयित पंक्ति में खड़ा नहीं हो सकते हैं । याचियों का मामला उस तारीख को अनुच्छेद 217(2)(क) के अधीन आता है और न कि अनुच्छेद 217(2)(ख) के अधीन आता है । अतएव, **महेश चंद्र गुप्ता** (उपर्युक्त) वाला मामला उनका कोई बचाव नहीं करेगा । **डी. के. शर्मा** (उपर्युक्त) वाले मामले में, दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय में **महेश चंद्र गुप्ता** (उपर्युक्त) वाले मामले के निर्णयासार का ही अनुसरण किया गया है ।

42. यह उल्लेख करना सुसंगत है कि अनुच्छेद 217(2)(क) में समाविष्ट अभिव्यक्ति 'न्यायिक पद' का निर्वचन **श्री कुमार पदमा प्रसाद** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में, अनुच्छेद 236(ख) में परिभाषित न्यायिक सेवा से संबंधित न्यायिक पद के अभिप्राय में ही किया गया

---

[1] (1992) 2 एस. सी. सी. 428.

है । इसलिए, आयकर अपील अधिकरण के सदस्यों का मामला, अनुच्छेद 217(2)(क) की परिधि के भीतर नहीं आ सकता है । **महेश चंद्र गुप्ता** (उपर्युक्त) वाले मामले में, विनिश्चय, अनुच्छेद 217(2)(ख) के संदर्भ में दिया गया था और न कि अनुच्छेद 217(2)(क) के संदर्भ में दिया गया था ।

43. शब्द 'धारण किया है' और शब्द 'किया गया है', अनुच्छेद 217(2) के अधीन उपखंड (क) और (ख) के साथ ही स्पष्टीकरण (क) और (कक) में बारम्बार दोहराया गया है । न्यायिक सेवा के संवर्ग से व्यक्ति के संबंध में, उपखंड (क) में शब्द 'धारण किया है' का प्रयोग किया गया है किन्तु, अधिवक्ता के संवर्ग से व्यक्ति के संबंध में उपखंड (ख) में किया गया है शब्दों का प्रयोग किया गया है । यह इस कारण से नितांत सुसंगत है कि स्पष्टीकरण (क) और (कक) में भी शब्द 'धारण किया है' को हमेशा ही शब्द 'न्यायिक पद' से आरंभ किया गया है और शब्द 'किया गया है' हमेशा ही शब्द 'अधिवक्ता' से प्रारंभ किया गया है ।

44. सामान्य भाषा शैली में शब्द 'धारण किया है' शब्द 'धारण किया है' या 'धारण किया गया है' से विपरीत विभेद है ।

45. दूसरे शब्दों में, शब्द 'किया गया है' का कोई ऐसा अर्थ नहीं है । कैम्ब्रिज डिक्शनरी में यह कथन है कि शब्द 'किया गया है', वर्तमान निश्चित निरंतर प्ररूप में है । डिक्शनरी यह कहता है कि हम वर्तमान निश्चित निरंतर प्ररूप का प्रयोग कर सकते हैं या तो हाल ही बीते हुए क्रियाकलाप को समाप्त करने के बारे में या बीते हुए समय के बिन्दु पर प्रारंभ एकल क्रियाकलाप के बारे में और निरंतर जारी है, के बारे में कर सकते हैं । इस बात को ध्यान में रखते हुए, स्पष्टीकरण (क) सीमित सीमा में ऐसे व्यक्तियों की सेवा अवधि को जोड़ने के फायदे प्रदत्त करता है जो न्यायिक पद धारण करते हैं । इस प्रकार प्रदत्त सीमित फायदों के लिए ऐसा व्यक्ति अर्ह हो सकता है जो 'अधिवक्ता के रूप में कार्य करने के पश्चात् कोई न्यायिक पद धारण किया है' । न तो अनुच्छेद 217(2) की भाषा के बारे में, न ही हमारे विवेक में कोई दुविधा है ।

46. यह तर्क कि सेवाओं की अवधियों को जोड़ने का फायदा उस व्यक्ति को मंजूर करना विवेकाधिकार होगा जो न्यायिक पद धारण करता है और बाद में अधिवक्ता हो जाता है, हमें आकर्षित नहीं करता है । वस्तुत:, अनुच्छेद 217(2) किसी भी व्यक्ति को उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किए जाने के किसी अधिकार की गारंटी नहीं देता है, फिर भी न्यायिक पद धारण करने वाला व्यक्ति बेहतर स्थिति में होता है क्योंकि वह कुछ ऐसे पद पर रहने के पश्चात् जैसे कनवेयर क्षेत्र उसका कैरियर प्रगति (यद्यपि सीमित में) सुनिश्चित होता है । अधिवक्ता के लिए ऐसी कोई सुनिश्चितता नहीं होती है । इसलिए, अनुच्छेद 14 पर आधारित तर्क हमें प्रभावित नहीं करते हैं ।

47. यह भी दलील दी गई थी कि कुछ व्यक्तियों जिनके नाम रिट याचिका के पैरा 16 में उल्लिखित हैं, ने जिला न्यायाधीशों के रूप में सेवा के 10 वर्ष की सेवा पूरी किए बिना उच्च न्यायालय में नियुक्तियां प्राप्त कर ली हैं । किन्तु, हमें यह जानकारी नहीं है कि उन्होंने किस प्रकार न्यायालय में वकालत करने के वर्षों की संख्या को जोड़ते हुए, इस प्रकार नियुक्तियां प्राप्त कर ली हैं । वास्तविक स्थिति यह है कि उन मामलों में अविभावी प्रक्रिया उपलब्ध नहीं है । उनमें से बहुत से व्यक्तियों ने जिनके नाम रिट याचिका के पैरा 16 में उल्लिखित हैं, संविधान (44वां संशोधन) अधिनियम, 1978 के पूर्व उच्च न्यायालय में नियुक्ति प्राप्त की है । इसलिए, हमें इस बात की जानकारी नहीं है कि उनके मामले में क्या हुआ है ।

48. इसलिए, अंत में, हमारा यह सुविचारित मत है कि रिट याचियों का दावा पूर्णतया कायम रखे जाने योग्य नहीं है और रिट याचिका भ्रांतिपूर्ण है । अतएव, रिट याचिका खारिज की जाती है । खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

रिट याचिका खारिज की गई ।

क.